

विभाजित होती जा रही है। विस्थापित होती जा रही है। इस प्रकार के सांस्कृतिक बदलाव की कई सारी कहानियाँ हैं- सुभाष चंद्र कुशवाहा की कहानी 'नून तेल मोबाइल', उदय प्रकाश का 'पॉल गोमरा का स्कूटर', जयनंदन का 'विश्व बाजार का ऊंट', अमरीक सिंह दीप का 'डाकुला', सुभाष पंत का 'बाजार', परितोष चक्रवर्ती की कहानी 'अंधेरा समुद्र' आदि।

ऋषिकेश सुलभ की कहानी 'डाइन' पढ़ने पर यह विस्थापित मानसिक द्वंद्व हमें घेर लेता है। डायन का नायक कोशी नदी की बाढ़ में किसी लापता लाश पर कब्जा करके बाढ़ में मरने वालों की सूची में वह अपने बाप का नाम दर्ज करता है और पैसा लेता है। लापता लोगों में अपनी माँ का नाम भी लिखवाकर वह पैसा वसूल करता है। तीन महीने के बाद जब माँ लौट आती है तो वह उसे पहचानने से इंकार करता है, माँ को देख कर उसे लगता है कि मुआवजे के रूप में कोशी नदी में बहे जा रहे हैं, और वह माँ के सामने 'डायन डायन' चिल्लाता है, क्योंकि नायक मानसिक रूप से अत्यंत विस्थापित हो गया है। उदय प्रकाश का 'पॉल गोमरा का स्कूटर' का नायक राम गोपाल सक्सेना अपनी अस्मिता से पलायन चाहता है। वह अपाची इंडियन, रेमो फर्नांडिस, साम पित्रोदा आदि की बराबरी करने के लिए अपना असली नाम राम गोपाल सक्सेना को बदल देने का निर्णय कर लेता है। अपने परिवेश से विखंडन वादी संस्कृति को वह अपना लेता है। इसकी वजह से बदल देता है अपना नाम राम गोपाल से पॉलगोमरा। अपने विघटित मानसिक स्थिति के कारण प्रेमचंद, लल्ललाल, हजारीप्रसाद, कबीरदास आदि नाम उसे पिछड़ा, दकियानुस और अधम दर्जे का लगने लगा। विस्थापन के दौर में पिता पुत्र के संबंध का एक अनोखा दास्तान है देवेन्द्र की कहानी 'क्षमा करो हे वत्स'। बहू के किसी और के साथ भाग जाने पर दांत पीसते हुए पिता बेटे से कहता है- हिजड़े जनखे! बूत नहीं था तो मुझसे कहा होता। उत्तर में बेटा चीख उठता है- मैंने आपको मना किया था क्या? हिंदी कहानी में ऐसे बाप बेटे का चित्रण भी मिलता है। तीसरे प्रकार का यह विस्थापन की मानसिकता यह विखंडित, विस्थापित, विभाजित मन का यह उपभोक्तावादी आकर्षण, विकर्षण उसे अपने समाज और संस्कृति से काटता है साथ ही साथ उसको समाज और संस्कृति से अलग भी कर देता है। जैसे गोमरा की कविता में व्यक्त की गयी है :-

'प्रजातियाँ लस हो रही है
यथार्थ मिटा रहा है जिनका अस्तित्व
हो सके तो हम उनकी/हत्था में न हो शामिल
और संभव हो तो संभाल कर रख लें
उनके चित्र/ये चित्र अतीत के स्मृति चिह्न हैं'।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. काला दिवस - अग्निशेखर
2. डाइन - ऋषिकेश सुलभ
3. पॉल गोमरा का स्कूटर - उदय प्रकाश
4. क्षमा करो हे वत्स - देवेन्द्र

सूरीनाम की हिंदी कविता: सूरीनामी संस्कृति का धरोहर

ब्लेस्सनराजू
शोधार्थी हिंदी विभाग
केरल विश्वविद्यालय
तिरुवनंतपुरम, केरल

डॉ. आर. जयचंद्रन
आचार्य
हिंदी विभाग, केरल
विश्वविद्यालय

सूरीनाम, हमारे देश से बहुत दूर स्थित है, बावजूद इसके, यह देश भारत से एक अटूट आस्था रखने वाला भारत का ही एक हिस्सा है। सरनामी भाषा हिंदी की एक बोली की तरह है। आज इस भाषा में साहित्यिक कृतियाँ हैं। सूरीनाम में हिंदी भाषा और साहित्य का उत्थान भारत के गिरमिटिया मजदूरों के परिश्रम से हुआ है। आज, सूरीनाम में हमारी तीसरी और चौथी पीढ़ी बसी हुई है। हर साहित्य की अपनी एक विशेष शैली होती है, और सूरीनामी हिंदी भी इस दृष्टि से अद्वितीय है। कविता पढ़ते समय हम अनुभव करते हैं कि सूरीनामी हिंदी, हिंदी एवं हिंदी की संरचना से बहुत सटा हुआ है। सरनामी हिंदी मूल रूप से हिंदी ही है, परंतु यह भारत की अवधी बोली से साम्य रखने वाला है। सूरीनाम के प्रमुख कवि सुरजन परोही जी के अनुसार "सरनामी हिंदी हमारी बोलचाल की भाषा है। हमारे पूरे जो गाँव से आये थे भारत के अलग-अलग गाँवों से थे, उनकी भाषा में कुछ डच मिलाकर बोलचाल की सरनामी बन गई। विद्वान लोग तो शुद्ध हिंदी ही चाहते हैं।"¹

सूरीनामी कविता की भाषिक संरचना में उनकी गिरमिटिया मजदूरी, दर्दनाक जीवन-संघर्ष, प्रतिरोध आदि परिलक्षित होते हैं। सूरीनाम के भारतीयों का तन, मन, जीवन और संस्कृति में जो बदलाव आया है वही इन कविताओं की मूल चेतना है। सूरीनाम के साहित्य के बारे में विमलेश क्रांति वर्मा जी ने इस प्रकार लिखा है:- "सूरीनाम के सभी साहित्यकारों ने बहुत अधिक मात्रा में साहित्य भले ही न रचा हो किन्तु जितना भी साहित्य रचा गया है उसमें विषयगत विविधता है। प्रवास का दर्द, देश छोड़ने का मलाल, अपनों की याद, नई जगह पर मिले कष्ट व यातनाएँ, और अपनी संस्कृति व भाषा के प्रति लगाव है। सूरीनाम के हिन्दी साहित्य में हिन्दुस्तानियों के जीवन-संघर्ष की कहानी है, उनकी प्रगति का विवेचन है, मन में उठने वाले भावों का चित्रण है।"²

सूरीनाम की कविताओं का विकास पूर्ण रूप से 1950 के बाद ही हुआ है। इन कविताओं की शिल्पगत एवं कथ्यगत विशेषताएँ और विविधता हिंदी से अपेक्षाकृत बहुत पीछे हैं। हिंदी साहित्य आज नव विमर्शों और वादों के बूते पर आगे बढ़ रही है। हिंदी कविताओं की भाषा, लोकप्रियता, संवेदनशीलता, आधुनिकता, अद्वितीयता आदि उनके साहित्यिक परंपरा से जुड़े हैं। लेकिन सूरीनामी कविताओं के लिए एक खास परंपरा विरासत में नहीं मिली है। अब भी सूरीनामी कविता विकास के पथ पर है। प्राप्त कविताओं को विश्लेषण करते वक्त यह महसूस

होता है कि सूरीनामी कवितायें उनके जीवन संबद्ध हैं। सूरीनाम में अप्रवासी भारतीयों ने जो देखा है और जो भुगता है इसका यथार्थ और सटीक बयान ही उनकी कविताओं की मूल संवेदना है। सरनामी कविताओं की मुख्य प्रवृत्तियाँ इस प्रकार हैं :-

देशप्रेम की भावना: गिरीजाशरण अग्रवाल जी के मुताबिक “देश-प्रेम विश्व के सभी आकर्षणों से बढ़कर है। यह एक ऐसा पवित्र व सात्विक भाव है, जो मनुष्य को निरंतर त्याग की प्रेरणा देता है। देश-प्रेम का संबंध मनुष्य की आत्मा से है। मानव की हार्दिक इच्छा रहती है कि उसका जन्म जिस भूमि पर हुआ है, वहीं पर वह मृत्यु का वरण करे।”³ सूरीनामी कविताओं में देशभक्ति की दो अवस्थाएं नज़र आती हैं। पहला सूरीनाम देश के प्रति प्रेम है। आज सूरीनाम, इस देश के प्रवासी भारतीयों के लिए उनका अपना देश जैसा बन गया है। पहले उनकी इच्छा भारत वापस जाने की थी, लेकिन आज उन्हें ऐसा एहसास होता है कि सूरीनाम उनकी मातृभूमि है। सूरीनाम के वरिष्ठ कवि अमर सिंह रमण जी ने इस प्रकार लिखा है-

“हम सूरीनामी, सूरीनाम हमारा
हम इसके प्यारे देश हमारा।
इस मिट्टी में बड़े हुए हैं
घुटनों के बल खड़े हुए हैं।”⁴

दूसरी श्रेणी में भारत के प्रति देशभक्ति से भरी कविताएँ हैं और इन कविताओं में वे खुद को भारतीय और भारत को अपनी माँ मानते हैं। वह आज भी अपने को प्रवासी मानते हैं। भारतीय भाषा, संस्कृति और साहित्य के प्रति प्रेम की भावना ही उनकी कविताओं की प्रमुख विशेषता है जिसके कारण वे आज भी भारत के अतीत में जी रहे हैं। आशा राजकुमार जी ने यों लिखा है :-

“हम कैसे भूल दी/हम हैं हिन्दुस्तानी
अपन हरी भरी देस/के छोड़ के काहे हम
जाए परदेस”⁵

भाषा के प्रति प्रेम : -अपनी संवेदनाओं और भावनाओं की अभिव्यक्ति के लिए मातृभाषा से बढ़कर दूसरा कोई सशक्त माध्यम नहीं है। देश प्रेम की तरह भाषा के प्रति भी उनकी कविताओं में अलग अलग दृष्टियाँ हैं। सरनामी को वे आज अपनी मातृभाषा मानते हैं उनकी कविता में ‘सरनामी’ के प्रति समर्पण एवं सेवा का भाव और सम्मान परिलक्षित हैं। मातृभाषा सरनामी के प्रति उनकी प्रेम एवं आस्था निर्विवाद है। यहाँ सरनामी के प्रति प्रेम अपने निम्न शब्दों में सुरजन परोही जी व्यक्त करता है -

“सरनामी हिंदी हमारी बोलचाल की भाषा है
भारत जैसे हमें इसे अपनाना है
हिंदी जिंदा तो धर्म-कर्म जिंदा है
नहीं तो धर्म ग्रन्थ कागज़ का
पुलिंदा है।”⁶

हिंदी भाषा को अपनी मातृभाषा माननेवाले कवियों की संख्या भी कम नहीं है। वे अपने भारत को मातृभूमि और हिंदी को मातृभाषा मानते हुए कवितायें लिखते हैं। धीरज कंधई जी ने

अपनी कविता में हिंदी भाषा के प्रति प्रेम भावना व्यक्त किया है :

“हिंदी ज्ञान/मेरे लिए अमृत रस पान
जितनी बार उसे पीता हूँ
लगता है उतनी बार जीता हूँ।”⁷

अप्रवासी याद:-प्रवासी भारतीयों द्वारा लिखी गयी उनकी रचनाओं में प्रवास की पीड़ा के प्रति उनकी यादें प्रस्तुत की गयी हैं। उनकी कवितायें अतीत में हैं। हर कवितायें उनकी पुरखों की पीड़ा एवं दर्द की याद दिलाती है और नई पीढ़ी उसे दौहराती है। उनकी कविताओं में प्रवास की पीड़ा है, विस्थापन का दर्द है, रिश्तों की दरकती ज़मीन है, जन्मभूमि के यूटोपियन चित्र और यथार्थ का अन्तर है, कर्मभूमि के लिए संघर्ष हैं, विडम्बनाएँ हैं, दोनों से न्याय करने की जिद्द है। अमर सिंह रमण जी इसका उल्लेख इसी प्रकार करता है:

“वही दिनवा जब याद आवेला अंखिया में भरेला पानी रे
हिंदुस्तान से भागकर आइली यही है अपनी कहानी रे
भाई छूटा, बाप छूटा और छूटी महतारी रे।

अरकटिया खूब भरमवलीस कहै पैसा कम्बू भर-भर थाली रे।
वही चक्कड़ मा पड़ गइली, बचवा याद आय गइल नानी रे।”⁸

सांस्कृतिक अस्मिताबोध:-सूरीनाम में भारतीयों की संख्या 27% है। अन्य देशवालों की तुलना में भारतीयों की संख्या बहुत ज्यादा नहीं है और सूरीनामी समाज के साहित्य, संस्कृति और भाषा आज खतरे में हैं। शरणकुमार जी के मुताबिक “जो संस्कृतियाँ आज खतरे में हैं उनकी सूची लम्बी है, और वे पूरे विश्व में फैली हैं, अपने परम्परागत आधार से उखाड़े जाने का जो भय उनमें समाया है वह निराधार नहीं है। बहुसंख्यक समूह अपने आप को सर्वेसर्वा मानकर अल्पसंख्यकों की सांस्कृतिक अस्मिता के लिए संकट उत्पन्न करते हैं, और अल्पसंख्यकों में यह आशंका तीव्र होती जाती है कि उनकी संस्कृति का बलपूर्वक दमन किया जाएगा।”⁹

इन सांस्कृतिक संकटों से सूरीनामी संस्कृति की रक्षा करने का प्रयास सूरीनाम की कविताओं में देखा जा सकता है। अधिकांश कविताओं में, कवि नई पीढ़ी को याद दिलाते हैं कि वे कौन थे और उनकी संस्कृति क्या थी। उदाहरणस्वरूप:

“भाषा भेष-भूषा हमारी पहचान है।

वैसे सब देशों में अलग-अलग /वैसे हमारी भाषा के साथ
और उससे संबंधित/बहुत कुछ अलग है।”¹⁰

खेती की संस्कृति :-कृषि भारतीयों की संस्कृति का मूल आधार है। इसी प्रकार, सूरीनाम में खेती को भारतीयों के सांस्कृतिक आधार के रूप में देखा जा सकता है। उन्हें वहाँ गन्ने के खेतों में काम करने के लिए बहला-फुसलाकर ले जाया गया था। उस समय उनके पास कुछ भी नहीं था। वहीं से वे आज के विकसित रूप में विकसित ही और सूरीनाम के नागरिक बन गये। आज सूरीनाम के खेतों में उनके खून-पसीनेकी महक है। माटी और मानुष का रिश्ता सूरीनामी कविताओं की मूल भावना है। सूरीनामी हिन्दुस्तानियों को खेती जीवन यापन का माध्यम नहीं बल्कि उनकी संस्कृति का

संवाहक भी है। देवानंद शिवराज जी ने इस प्रकार लिखा है:
 “धान की खेती अति सुकृ देती / किसानों का मन मोह लेती
 कीचड़ पानी में नित मेहनत करते / नहीं सरदी गरमी से डरते”^{१३}

राजनीतिक व्यंग्य:-सूरीनाम की राजनीतिक परिस्थितियाँ सरनामी भारतीयों के अनुकूल नहीं थीं। वे उन्हें केवल ‘कुली’ मानते थे, इसलिए वे कई दशकों तक मौलिक अधिकारों से वंचित रहे। सूरीनाम की आजादी के बाद उन्हें अपनी भाषा को राजनीतिक मान्यता दिलाने के लिए भी संघर्ष करना पड़ा। आजादी के बाद बढ़ती गरीबी, राजनीतिक अस्थिरता, भ्रष्टाचार, चरित्रहीन नेताओं का शासन, देश में हो रहे विभिन्न आंदोलन आदि सरनामी कविताओं में व्यक्त किया गया है। सुशीला सुक्खू जी इस प्रकार कहते हैं:

“कैसा नेता/कैसी राजनीती

कैसी नेतागिरीलोग फिर भी हैं दुखी।

क्या फायदा बोट बटोरन/जब तुम्हें आता नहीं जोड़ना।”^{१४}

शिक्षा का महत्त्व : -सूरीनाम के भारतीय ठीक से पढ़ना भी नहीं जानते थे। उन्हें रामायण, महाभारत, मानस आदि के अलावा किसी भी चीज का ज्ञान नहीं था। वे लोग ठीक से हस्ताक्षर भी नहीं कर पाते थे। इसलिए उन्हें सूरीनाम में गुलामी का जीवन जीना पड़ा। चीन जैसे अन्य देशों के श्रमिकों को सूरीनाम में भारतीयों की तुलना में अधिक अधिकार मिले। यह पहली पीढ़ी की बात है। इसके बाद उन्होंने वहां एक स्कूल खोला, बच्चों को काम पर न भेजकर उन्हें शिक्षा दी। बच्चों का यह भी समझाने का प्रयास किया कि शिक्षा ही मोक्ष है और शिक्षा के बिना समाज में कोई जगह नहीं है। यहाँ संध्या भग्गू जी इसी बात को कविताओं के माध्यम से नई पीढ़ी तक ले जाने का प्रयास करती हैं और इसे अपना कर्तव्य भी समझती हैं।

“पढ़ो बच्चो/मिलकर पढ़ो/अपने अधिकार के लिए लड़ो

दीये की तरह जलते रहो/अपने लिए आगे आगे बढ़ो”^{१५}

जीवन यथार्थ:-सूरीनामी कविता जीवन यथार्थ से अधिक निकट है। कवि की दृष्टि सदैव सामान्य जन और जनसाधारण तक ही सीमित रही है। सामाजिक चेतना और सामाजिक यथार्थ दोनों कविताओं का विषय बन गया है। आर्थिक विषमता, मजदूरों का संघर्ष, धार्मिक पाखंड, पारिवारिक एवं सामाजिक जीवन की विषमताएँ आदि आम आदमी से जुड़े सामान्य विषयों को कवियों ने जीवंतता के साथ वास्तविकता के धरातल पर प्रतिष्ठित करने का प्रयास किया है। उनके प्रवासी जीवन और सूरीनाम जीवन की यातनाएँ कारमेन जगलाल जी की कविता में इस प्रकार दर्शाया गया है:

रोज सवेरे कल्लीस चमूँ/रास्ता पकड़ी खेत के

बगल में टाँग सतव पानी और/झटक पटक के टाँग बढ़ाऊँ।”^{१६}

कबीर और तुलसी जैसे महान व्यक्तित्वों का प्रभाव:-सूरीनामी कविताओं से यह समझा जा सकता है कि सूरीनाम के भारतीयों पर केवल दो लोगों का प्रभाव रहा है। पहला व्यक्ति है श्रीराम, यह तो सभी जानते हैं। अरकाटी एजेंटों ने उनसे कहा कि उन्हें श्रीराम को देश ले जाना है। यही विश्वास के साथ वे यहां आये थे। इस लिए रामचरितमानस और तुलसी का प्रभाव उनके लोक गीतों में और सर्जनात्मक काव्यों में दृष्टव्य है। दूसरा व्यक्ति है – कबीर, कबीर के दोहों से प्रभावित होकर अनेक दोहों और चौपाईयों की रचना हुई है।

साथ ही उपदेशपरक और नीतिसार दोहों को कबीर की दोहों की छाया है। ईश्वर के विषय में कबीर और सरनामी कवियों का मत एक ही है। जिस तरह से हिंदी साहित्य के निर्माण में कबीर का योगदान है वैसे ही सूरीनाम में हिंदी भाषा और भाव के निर्माण में कबीर की अमरवाणी का स्थान है। कारमेन जगलाल जी कबीर की तरह इस प्रकार लिखा है : -

“मैंने भगवान से पूछा-तुम कहाँ /

भगवान ने कहा मैं आप ही के पास /आप ही में हूँ”^{१७}

संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि सूरीनाम की हिंदी कविताएँ विषय विविधता और भाषिक तत्वों के प्रयोग में हिंदी भाषा एवं साहित्य की तरह पूर्ण रूप से विकसित नहीं हुई हैं। सरनामी कविताओं की खूबी यह है कि ये कविताएं मानव जीवन, उनके अस्तित्व की और उनकी यथार्थता को प्रतिबिंबित करने वाली हैं। संवेदनाओं का संप्रेषण ही इन कविताओं का मूल तेवर है। सरनामी कविताएँ अलंकार, छंद, भाषा शैली, और शिल्प पक्ष से ज्यादा कथ्य पक्ष को अधिक महत्व देता है। सूरीनामी कवियों के लिए कविता एक साधन मात्र है जिसके जरिए उनके अतीत के यथार्थ, वर्तमान जीवन और भविष्य के स्वप्नों को अंकित करने की कोशिश जारी है। सूरीनामी कवि जब भी लिखना चाहते हैं, वे लिखते हैं, क्योंकि भाषाई सीमा में सूरीनाम की कविता को बांधी नहीं जा सकती है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. सरनामी हिंदी : हिंदी का विश्व फलक, विमलेश क्रांति वर्मा, भावना सक्सेना, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, नई दिल्ली २०२१, पृ. सं १०२
2. सूरीनाम का सृजनात्मक हिंदी साहित्य, सं. विमलेश क्रांति वर्मा, भावना सक्सेना, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली 2015, पृ. सं ३१
3. निबंध एवं पत्र लेखन, डॉ. गिरीजाशरण अग्रवाल, डॉ. मीना अग्रवाल, डायमंड बुक्स, नई दिल्ली 2015, पृ सं 51
4. सूरीनाम का सृजनात्मक हिंदी साहित्य, सं. विमलेश क्रांति वर्मा, भावना सक्सेना, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली 2015, पृ. सं 38
5. सूरीनाम का सृजनात्मक हिंदी साहित्य, सं. विमलेश क्रांति वर्मा, भावना सक्सेना, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली 2015, पृ. सं 44
6. सूरीनाम का सृजनात्मक हिंदी साहित्य, सं. विमलेश क्रांति वर्मा, भावना सक्सेना, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली 2015, पृ. सं 156
7. सूरीनाम का सृजनात्मक हिंदी साहित्य, सं. विमलेश क्रांति वर्मा, भावना सक्सेना, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली 2015, पृ. सं 88
8. प्रवासी भारतीय हिंदी साहित्य, सं. विमलेश क्रांति वर्मा, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली 2016, पृ. सं 69
9. परंपरा और परिवर्तन, शरणकुमार दुबे, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली 2001, पृ. सं 35
10. प्रवासी भारतीय हिंदी साहित्य, सं. विमलेश क्रांति वर्मा, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली 2016, पृ. सं 108
11. सूरीनाम का सृजनात्मक हिंदी साहित्य, सं. विमलेश क्रांति वर्मा, भावना सक्सेना, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली 2015, पृ. सं 85
12. सूरीनाम का सृजनात्मक हिंदी साहित्य, सं. विमलेश क्रांति वर्मा, भावना सक्सेना, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली 2015, पृ. सं 164
13. सूरीनाम का सृजनात्मक हिंदी साहित्य, सं. विमलेश क्रांति वर्मा, भावना सक्सेना, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली 2015, पृ. सं 149
14. सूरीनाम का सृजनात्मक हिंदी साहित्य, सं. विमलेश क्रांति वर्मा, भावना सक्सेना, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली 2015, पृ. सं 149
15. सूरीनाम का सृजनात्मक हिंदी साहित्य, सं. विमलेश क्रांति वर्मा, भावना सक्सेना, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली 2015, पृ. सं 51